शिक्षा का पश्चिमीकरण

अंग्रेजी राज्य की स्थापना और आर्थिक परिवर्तनों के संदर्भ में जीवन की नई समस्याएँ पैदा हुई। इन समस्याओं से जूझने के लिए नए दृष्टिकोणों की आवश्यकता पड़ी। कहना न होगा कि नई शिक्षा प्रणाली द्वारा जो ज्ञान-विज्ञान उपलब्ध हुआ उससे बहुत सहायता मिली।

१८वीं शताब्दी के अन्त में इस देश को जिस पाश्चात्य ज्ञान-विज्ञान के संपर्क में आना पड़ा वह भारत के ज्ञान-विज्ञान से प्रकृति में ही भिन्न था। भारतीय ज्ञान गतानुगतिक और परंपराभुक्त हो चला था। पाश्चात्य ज्ञान-विज्ञान नए जीवन संदर्भों की ताजगी लिये हुए था। भारतीय ज्ञान-विज्ञान का लक्ष्य आध्यात्मिक और पारलौकिक था तो पाश्चात्य ज्ञान-विज्ञान का लक्ष्य भौतिक और इहलौकिक। इस देश की विद्या वर्ग या जाति विशेष तक सीमित थी पर पाश्चात्य विद्या सर्वसुलभ थी।

फिर भी ज्ञान-विज्ञान के अनेक क्षेत्रों में इस देश ने अभूतपूर्व प्रगति की थी। दर्शन, ज्योतिष, गणित, औषधि, विज्ञान, धर्मशास्त्र, काव्यशास्त्र, व्याकरण आदि में इसकी जोड़ का कोई अन्य देश नहीं था। पर अब उन्हीं को दुहराया जा रहा था, नई उद्‌भावनाओं का मार्ग अवरुद्ध हो चला था। वेदादि की आप्तता, वर्णाश्रम धर्म की श्रेष्ठता, इहलौकिकता के प्रति अनासक्ति भाव यथास्थिति बनाये रखने के पक्षधर थे। नई परिस्थितियों में उनकी उपयोगिता के आगे प्रश्न चिन्ह लग गया था। मुसलमानों में भी उसी प्रकार की गतानुगतिकता घर कर गई थी।

मैकाले ने दोनों की शिक्षा-पद्धतियों पर टिप्पणी करते हुए लिखा है—"हिन्दुओं और मुसलमानों की शिक्षा-पद्धतियों में बहुत कुछ समानता थी। वे उस भाषा में शिक्षा देते थे जो जनता की भाषा नहीं थी। उनकी शिक्षा का मूलस्रोत धर्म था और उसकी आसता अपरिवर्तनीय थी। वे नए अभिनिवेश और परिवर्तन के विरुद्ध थे—"इस प्रकार की शिक्षा-पद्धति अपने धर्म के प्रति कट्टरता की भावना ही पैदा कर सकती थी। इनके द्वारा स्वतंत्र व्यक्तित्व और विवेक सम्मत (रेशनल) वैज्ञानिक दृष्टिकोण का निर्माण संभव नहीं था।

आधुनिक शिक्षा-पद्धति का समारंभ एक महत्वपूर्ण ऐतिहासिक घटना है। आधुनिक होने की दिशा में यह एक गत्यात्मक प्रयत्न माना जायगा।

आधुनिक शिक्षा प्रणाली के प्रसार में मुख्यतः तीन शक्तियों का योगदान है—१. ईसाई मिशन, २. अंग्रेज सरकार और ३. व्यक्तिगत प्रयास।

ब्रिटिश राज्य की स्थापना के पूर्व ईसाई मिशन, दक्षिण भारत में, धर्म-प्रचार के कार्य में लगे हुए थे। नई शिक्षा से उनका कोई संबंध नहीं था। प्लासी युद्ध के बाद सन् १७५८ में डेनिश मिशन कलकत्ता आया। परन्तु इसका क्रिया-कलाप भी सीमित रहा। १८९३ में मिशनरियों का दूसरा महत्त्वपूर्ण दल कलकत्ते पहुँचा। कैरे और उनके दो सहयोगियों ने, जो उस मिशन से सम्बद्ध थे, नए बंगाल के निर्माण में महत्त्व की भूमिका निभाई। बँगला गद्य की नींव डालने वाले लोगों में कैरे भी है। सन् १८१३ में कंपनी ने एक नया चार्टर स्वीकृत किया। इसके अनुसार शिक्षा आदि उपयोगी काम के लिए अनुदान देने की व्यवस्था की गई। इस चार्टर के बाद आने वाले मिशनरियों में अलेक्जेंडर डफ का कार्य सर्वाधिक उल्लेखनीय है। कंपनी के अधिकारियों पर डफ का विशेष प्रभाव था। डफ धर्म-प्रचार का कार्य अंग्रेजी शिक्षा के प्रचार द्वारा करना चाहता था। डफ को धर्म-प्रचार के कार्य में तो सफलता प्रायः नहीं ही मिली पर इसी बहाने अंग्रेजी शिक्षा देने वाले बहुत से स्कूल-कालेज खुल गए।

ईसाई मिशनरियों ने जो कुछ कार्य किया उसके पीछे न तो कोई आध्यात्मिक प्रेरणा थी न अनुग्रह की भावना। वे ईसाई धर्म-प्रचार में लगे हुए थे। अपने धर्म के प्रचारार्थ उन्होंने हिन्दुओं और मुसलमानों के धर्मों पर निस्संकोच आक्रमण किया, उनकी निन्दा की। प्रत्येक मिशन स्कूल में ईसाई धर्म की शिक्षा अनिवार्य थी। उनका विश्वास था कि प्रत्येक अध्यापक विज्ञान और गणित पढ़ाते हुए प्रकारान्तर से भारतीय धर्मों को तोड़ने में मदद करता है। पर आँकड़ों से जाहिर है कि बहुत कम लोग ईसाई धर्म की श्रेष्ठता से प्रभावित होकर उसमें दीक्षित हुए। जिन लोगों ने उस धर्म को स्वीकार किया उन लोगों को प्रेरणा देने वाली वस्तु धर्म की श्रेष्ठता नहीं, अर्थ की श्रेष्ठता थी।

फिर भी मिशनरियों के अपने काम ने भी भारतीय भाषाओं को गद्यशैली दी। भारतीय भाषाओं (हिन्दी, बँगला, मराठी, गुजराती आदि) की गद्यशैली अत्यंत आरंभिक स्थिति में थी। जनता में धर्म के प्रचारार्थ मिशनरियों को उसकी जरूरत महसूस हुई। कैरे, ब्राउन, नेवलिन, स्किनर, बैले आदि ने भारतीय भाषाओं में बाइबिल का अनुवाद किया। स्कूलों में पढ़ाने के लिए उन्हें पाठ्य पुस्तकें भी लिखनी पड़ी। भारतीय धर्म, पुराण आदि